पाजेब

कहानी

जैनेन्द्र कुमार

भारत-दर्शन प्रकाशन

www.bharatdarshan.co.nz

पाजेब

बाजार में एक नई तरह की पाजेब चली है। पैरों में पड़कर वे बड़ी अच्छी मालूम होती हैं। उनकी कड़ियां आपस में लचक के साथ जुड़ी रहती हैं कि पाजेब का मानो निज का आकार कुछ नहीं है, जिस पांव में पड़े उसी के अनुकूल ही रहती हैं।

पास-पड़ोस में तो सब नन्हीं-बड़ी के पैरों में आप वही पाजेब देख लीजिए। एक ने पहनी कि फिर दूसरी ने भी पहनी। देखा-देखी में इस तरह उनका न पहनना मुश्किल हो गया है।

हमारी मुन्नी ने भी कहा कि बाबूजी, हम पाजेब पहनेंगे। बोलिए भला कठिनाई से चार बरस की उम्र और पाजेब पहनेगी।

मैंने कहा, कैसी पाजेब?

बोली, वही जैसी रुकमन पहनती है, जैसी शीला पहनती है।

मैंने कहा, अच्छा-अच्छा।

बोली, मैं तो आज ही मंगा लूंगी।

मैंने कहा, अच्छा भाई आज सही।

उस वक्त तो खैर मुन्नी किसी काम में बहल गई। लेकिन जब दोपहर आई मुन्नी की बुआ, तब वह मुन्नी सहज मानने वाली न थी।

बुआ ने मुन्नी को मिठाई खिलाई और गोद में लिया और कहा कि अच्छा, तो तेरी पाजेब अबके इतवार को जरूर लेती आऊंगी।

इतवार को बुआ आई और पाजेब ले आई। मुन्नी पहनकर खुशी के मारे यहां-से-वहां ठुमकती फिरी। रुकमन के पास गई और कहा-देख रुकमन, मेरी पाजेब। शीला को भी अपनी पाजेब दिखाई। सबने पाजेब पहनी देखकर उसे प्यार किया और तारीफ की। सचमुच वह चांदी कि सफेद दो-तीन लड़ियां-सी टखनों के चारों ओर लिपटकर, चुपचाप बिछी हुई, बहुत ही सुघड़ लगती थी, और बच्ची की खुशी का ठिकाना न था।

और हमारे महाशय आशुतोष, जो मुन्नी के बड़े भाई थे, पहले तो मुन्नी को सजी-बजी देखकर बड़े खुश हुए। वह हाथ पकड़कर अपनी बढ़िया मुन्नी को पाजेब-सहित दिखाने के लिए आस-पास ले गए। मुन्नी की पाजेब का गौरव उन्हें अपना भी मालूम होता था। वह खूब हँसे और ताली पीटी, लेकिन थोड़ी देर बाद वह ठुमकने लगे कि मुन्नी को पाजेब दी, सो हम भी बाईसिकिल लेंगे।

बुआ ने कहा कि अच्छा बेटा अबके जन्म-दिन को तुझे बाईसिकिल दिलवाएंगे।

आशुतोष बाबू ने कहा कि हम तो अभी लेंगे।

बुआ ने कहा, 'छी-छी, तू कोई लड़की है? जिद तो लड़कियाँ किया करती हैं। और लड़कियाँ रोती हैं। कहीं बाबू साहब लोग रोते हैं?"

आशुतोष बाबू ने कहा कि तो हम बाईसिकिल जरूर लेंगे जन्म-दिन वाले रोज।

बुआ ने कहा कि हां, यह बात पक्की रही, जन्म-दिन पर तुमको बाईसिकिल मिलेगी।

इस तरह वह इतवार का दिन हंसी-खुशी पूरा हुआ। शाम होने पर बच्चों की बुआ चली गई। पाजेब का शौक घड़ीभर का था। वह फिर उतारकर रख-रखा दी गई; जिससे कहीं खो न जाए। पाजेब वह बारीक और सुबुक काम की थी और खासे दाम लग गए थे।

श्रीमतीजी ने हमसे कहा, क्यों जी, लगती तो अच्छी है, मैं भी अपने लिए बनवा लूं?

मैंने कहा कि क्यों न बनावाओं! तुम कौन चार बरस की नहीं हो?

खैर, यह हुआ। पर मैं रात को अपनी मेज पर था कि श्रीमती ने आकर कहा कि तुमने पाजेब तो नहीं देखी?

मैंने आश्चर्य से कहा कि क्या मतलब?

बोली कि देखो, यहाँ मेज-वेज पर तो नहीं है? एक तो है पर दूसरे पैर की मिलती नहीं है। जाने कहां गई?

मैंने कहा कि जाएगी कहाँ? यहीं-कहीं देख लो। मिल जाएगी।

उन्होंने मेरे मेज के कागज उठाने-धरने शुरू किए और आलमारी की किताबें टटोल डालने का भी मनसूबा दिखाया।

मैंने कहा कि यह क्या कर रही हो? यहां वह कहाँ से आएगी?

जवाब में वह मुझी से पूछने लगी कि फिर कहाँ है?

मैंने कहा तुम्हीं ने तो रखी थी। कहाँ रखी थी?

बतलाने लगी कि दोपहर के बाद कोई दो बजे उतारकर दोनों को अच्छी तरह संभालकर उस नीचे वाले बाक्स में रख दी थीं। अब देखा तो एक है, दूसरी गायब है।

मैंने कहा कि तो चलकर वह इस कमरे में कैसे आ जाएगी? भूल हो गई होगी। एक रखी होगी, एक वहीं-कहीं फर्श पर छूट गई होगी। देखो, मिल जाएगी। कहीं जा नहीं सकती।

इस पर श्रीमती कहा-सुनी करने लगीं कि तुम तो ऐसे ही हो। खुद लापरवाह हो, दोष उल्टे मुझे देते हो। कह तो रही हूँ कि मैंने दोनों संभालकर रखी थीं।

मैंने कहा कि संभालकर रखी थीं, तो फिर यहां-वहां क्यों देख रही थी? जहां रखी थीं वहीं से ले लो न। वहां नहीं है तो फिर किसी ने निकाली ही होगी।

श्रीमती बोलीं कि मेरा भी यही ख्याल हो रहा है। हो न हो, बंसी नौकर ने निकाली हो। मैंने रखी, तब वह वहां मौजूद था।

मैंने कहा, तो उससे पूछा?

बोलीं, वह तो साफ इंकार कर रहा है।

मैंने कहा, तो फिर?

श्रीमती जोर से बोली, तो फिर मैं क्या बताऊं? तुम्हें तो किसी बात की फिकर है नही। डांटकर कहते क्यों नहीं हो, उस बंसी को बुलाकर? जरूर पाजेब उसी ने ली है।

मैंने कहा कि अच्छा, तो उसे क्या कहना होगा? यह कहूं कि ला भाई पाजेब दे दे!

श्रीमती झल्ला कर बोलीं कि हो चुका सब कुछ तुमसे। तुम्हीं ने तो उस नौकर की जात को शहजोर बना रखा है। डांट न फटकार, नौकर ऐसे सिर न चढ़ेगा तो क्या होगा?

बोलीं कि कह तो रही हूं कि किसी ने उसे बक्स से निकाला ही है। और सोलह में पंद्रह आने यह बंसी है। सुनते हो न, वही है।

मैंने कहा कि मैंने बंसी से पूछा था। उसने नहीं ली मालूम होती।

इस पर श्रीमती ने कहा कि तुम नौकरों को नहीं जानते। वे बड़े छंटे होते हैं। बंसी चोर जरूर है। नहीं तो क्या फरिश्ते लेने आते?

मैंने कहा कि तुमने आशुतोष से भी पूछा?

बोलीं, पूछा था। वह तो खुद ट्रंक और बक्स के नीचे घुस-घुसकर खोज लगाने में मेरी मदद करता रहा है। वह नहीं ले सकता।

मैंने कहा, उसे पतंग का बड़ा शौक है।

बोलीं कि तुम तो उसे बताते-बरजते कुछ हो नहीं। उमर होती जा रही है। वह यों ही रह जाएगा। तुम्हीं हो उसे पतंग की शह देने वाले।

मैंने कहा कि जो कहीं पाजेब ही पड़ी मिल गई हो तो?

बोलीं, नहीं, नहीं! मिलती तो वह बता न देता?

खैर, बातों-बातों में मालूम हुआ कि उस शाम आशुतोष पतंग और डोर का पिन्ना नया लाया है।

श्रीमती ने कहा कि यह तुम्हीं हो जिसने पतंग की उसे इजाजत दी। बस सारे दिन पतंग-पतंग। यह नहीं कि कभी उसे बिठाकर सबक की भी कोई बात पूछो। मैं सोचती हूँ कि एक दिन तोड़-ताड़ दूं उसकी सब डोर और पतंग।

मैंने कहा कि खैर; छोड़ो। कल सवेरे पूछ-ताछ करेंगे।

सवेरे बुलाकर मैंने गंभीरता से उससे पूछा कि क्यों बेटा, एक पाजेब नहीं मिल रही है, तुमने तो नहीं देखी?

वह गुम हो गया। जैसे नाराज हो। उसने सिर हिलाया कि उसने नहीं ली। पर मुंह नहीं खोला।

मैंने कहा कि देखो बेटे, ली हो तो कोई बात नहीं, सच बता देना चाहिए।

उसका मुँह और भी फूल आया। और वह गुम-सुम बैठा रहा।

मेरे मन में उस समय तरह-तरह के सिद्धांत आए। मैंने स्थिर किया कि अपराध के प्रति करुणा ही होनी चाहिए। रोष का अधिकार नहीं है। प्रेम से ही अपराध-वृति को जीता जा सकता है। आतंक से उसे दबाना ठीक नहीं है। बालक का स्वभाव कोमल होता है और सदा ही उससे स्नेह से व्यवहार करन चाहिए, इत्यादि।

मैंने कहा कि बेटा आशुतोष, तुम घबराओ नहीं। सच कहने में घबराना नहीं चाहिए। ली हो तो खुल कर कह दो, बेटा! हम कोई सच कहने की सजा थोड़े ही दे सकते हैं। बल्कि बोलने पर तो इनाम मिला करता है।

आशुतोष तब बैठा सुनता रहा। उसका मुंह सूजा था। वह सामने मेरी आँखों में नहीं देख रहा था। रह-रहकर उसके माथे पर बल पड़ते थे।

"क्यों बेटे, तुमने ली तो नहीं?"

उसने सिर हिलाकर क्रोध से अस्थिर और तेज आवाज में कहा कि मैंने नहीं ली, नहीं ली, नहीं ली। यह कहकर वह रोने को हो आया, पर रोया नहीं। आँखों में आँसू रोक लिए।

उस वक्त मुझे प्रतीत हुआ, उग्रता दोष का लक्षण है।

मैंने कहा, देखो बेटा, डरो नहीं; अच्छा जाओ, ढूंढो; शायद कहीं पड़ी हुई वह पाजेब मिल जाए। मिल जाएगी तो हम तुम्हें इनाम देंगे।

वह चला गया और दूसरे कमरे में जाकर पहले तो एक कोने में खड़ा हो गया। कुछ देर चुपचाप खड़े रहकर वह फिर यहां-वहां पाजेब की तलाश में लग गया।

श्रीमती आकर बोलीं, आशू से तुमने पूछ लिया? क्या ख्याल है?

मैंने कहा कि संदेह तो मुझे होता है। नौकर का तो काम यह है नहीं!

श्रीमती ने कहा, नहीं जी, आशू भला क्यों लेगा?

मैं कुछ बोला नहीं। मेरा मन जाने कैसे गंभीर प्रेम के भाव से आशुतोष के प्रति उमड़ रहा था। मुझे ऐसा मालूम होता था कि ठीक इस समय आशुतोष को हमें अपनी सहानुभूति से वंचित नहीं करना चाहिए। बल्कि कुछ अतिरिक्त स्नेह इस समय बालक को मिलना चाहिए। मुझे यह एक भारी दुर्घटना मालूम होती थी। मालूम होता था कि अगर आशुतोष ने चोरी की है तो उसका इतना दोष नहीं है; बल्कि यह हमारे ऊपर बड़ा भारी इल्जाम है। बच्चे में चोरी की आदत भयावह हो सकती है, लेकिन बच्चे के लिए वैसी लाचारी उपस्थित हो आई, यह और भी कहीं भयावह है। यह हमारी आलोचना है। हम उस चोरी से बरी नहीं हो सकते।

मैंने बुलाकर कहा, "अच्छा सुनो। देखो, मेरी तरफ देखो, यह बताओ कि पाजेब तुमने छुन्नू को दी है न?"

वह कुछ देर कुछ नहीं बोला। उसके चेहरे पर रंग आया और गया। मैं एक-एक छाया ताड़ना चाहता था।

मैंने आश्वासन देते हुए कहा कि डरने की कोई बात नहीं। हाँ, हाँ, बोलो डरो नहीं। ठीक बताओ, बेटे ! कैसा हमारा सच्चा बेटा है!

मानो बड़ी कठिनाई के बाद उसने अपना सिर हिलाया।

मैंने बहुत खुश होकर कहा कि दी है न छुन्नू को ?

उसने सिर हिला दिया।

अत्यंत सांत्वना के स्वर में स्नेहपूर्वक मैंने कहा कि मुंह से बोलो। छुन्नू को दी है?

उसने कहा, "हाँ-आँ।"

मैंने अत्यंत हर्ष के साथ दोनों बाँहों में लेकर उसे उठा लिया। कहा कि ऐसे ही बोल दिया करते हैं अच्छे लड़के। आशू हमारा राजा बेटा है। गर्व के भाव से उसे गोद में लिए-लिए मैं उसकी माँ की तरफ गया। उल्लासपूर्वक बोला कि देखो हमारे बेटे ने सच कबूल किया है। पाजेब उसने छुन्नू को दी है।

सुनकर माँ उसकी बहुत खुश हो आईं। उन्होंने उसे चूमा। बहुत शाबाशी दी ओर उसकी बलैयां लेने लगी !

आशुतोष भी मुस्करा आया, अगरचे एक उदासी भी उसके चेहरे से दूर नहीं हुई थी।

उसके बाद अलग ले जाकर मैंने बड़े प्रेम से पूछा कि पाजेब छुन्नू के पास है न? जाओ, माँग ला सकते हो उससे?

आशुतोष मेरी ओर देखता हुआ बैठा रहा। मैंने कहा कि जाओ बेटे! ले आओ।

उसने जवाब में मुंह नहीं खोला।

मैंने आग्रह किया तो वह बोला कि छुन्नू के पास नहीं हुई तो वह कहाँ से देगा ?

मैंने कहा कि तो जिसको उसने दी होगी उसका नाम बता देगा। सुनकर वह चुप हो गया। मेरे बार-बार कहने पर वह यही कहता रहा कि पाजेब छुन्नू के पास न हुई तो वह देगा कहाँ से ?

अंत में हारकर मैंने कहा कि वह कहीं तो होगी। अच्छा, तुमने कहाँ से उठाई थी ?

"पड़ी मिली थी ।"

"और फिर नीचे जाकर वह तुमने छुन्नू को दिखाई ?"

"हाँ !"

"फिर उसी ने कहा कि इसे बेचेंगे !"

"हाँ !"

"कहाँ बेचने को कहा ?"

"कहा मिठाई लाएंगे ?"

"नहीं, पतंग लाएंगे ?"

"हाँ!"

"सो पाजेब छुन्नू के पास रह गई ?"

"हाँ !"

"तो उसी के पास होनी चाहिए न ! या पतंग वाले के पास होगी ! जाओ, बेटा, उससे ले आओ। कहना, हमारे बाबूजी तुम्हें इनाम देंगे।

वह जाना नहीं चाहता था। उसने फिर कहा कि छुन्नू के पास नहीं हुई तो कहाँ से देगा !

मुझे उसकी जिद बुरी मालूम हुई। मैंने कहा कि तो कहीं तुमने उसे गाड़ दिया है? क्या किया है? बोलते क्यों नहीं?

वह मेरी ओर देखता रहा, और कुछ नहीं बोला।

मैंने कहा, कुछ कहते क्यों नहीं?

वह गुम-सुम रह गया। और नहीं बोला।

मैंने डपटकर कहा कि जाओ, जहाँ हो वही से पाजेब लेकर आओ।

जब वह अपनी जगह से नहीं उठा और नहीं गया तो मैंने उसे कान पकड़कर उठाया। कहा कि सुनते हो ? जाओ, पाजेब लेकर आओ। नहीं तो घर में तुम्हारा काम नहीं है।

उस तरह उठाया जाकर वह उठ गया और कमरे से बाहर निकल गया । निकलकर बरामदे के एक कोने में रूठा मुंह बनाकर खड़ा रह गया ।

मुझे बड़ा क्षोभ हो रहा था। यह लड़का सच बोलकर अब किस बात से घबरा रहा है, यह मैं कुछ समझ न सका। मैंने बाहर आकर धीरे से कहा कि जाओ भाई, जाकर छुन्नू से कहते क्यों नहीं हो?

पहले तो उसने कोई जवाब नहीं दिया और जवाब दिया तो बार-बार कहने लगा कि छुन्नू के पास नहीं हुई तो वह कहाँ से देगा?

मैंने कहा कि जितने में उसने बेची होगी वह दाम दे देंगे। समझे न जाओ, तुम कहो तो।

छुन्नू की माँ तो कह रही है कि उसका लड़का ऐसा काम नहीं कर सकता। उसने पाजेब नहीं देखी।

जिस पर आशुतोष की माँ ने कहा कि नहीं तुम्हारा छुन्नू झूठ बोलता है। क्यों रे आशुतोष, तैने दी थी न?

आशुतोष ने धीरे से कहा, हाँ, दी थी।

दूसरे ओर से छुन्नू बढ़कर आया और हाथ फटकारकर बोला कि मुझे नहीं दी। क्यों रे, मुझे कब दी थी ?

आशुतोष ने जिद बांधकर कहा कि दी तो थी। कह दो, नहीं दी थी ?

नतीजा यह हुआ कि छुन्नू की माँ ने छुन्नू को खूब पीटा और खुद भी रोने लगी। कहती जाती कि हाय रे, अब हम चोर हो गए। कुलच्छनी औलाद जाने कब मिटेगी ?

बात दूर तक फैल चली। पड़ोस की स्त्रियों में पवन पड़ने लगी। और श्रीमती ने घर लौटकर कहा कि छुन्नू और उसकी माँ दोनों एक-से हैं। मैंने कहा कि तुमने तेजा-तेजी क्यों कर डाली? ऐसी कोई बात भला सुलझती है !

बोली कि हाँ, मैं तेज बोलती हूँ। अब जाओ ना, तुम्हीं उनके पास से पाजेब निकालकर लाते क्यों नहीं ? तब जानूँ, जब पाजेब निकलवा दो।

मैंने कहा कि पाजेब से बढ़कर शांति है । और अशांति से तो पाजेब मिल नहीं जाएगी।

श्रीमती बुदबुदाती हुई नाराज होकर मेरे सामने से चली गईं ।

थोड़ी देर बाद छुन्नू की माँ हमारे घर आई । श्रीमती उन्हें लाई थी। अब उनके बीच गर्मी नहीं थी, उन्होंने मेरे सामने आकर कहा कि छुन्नू तो पाजेब के लिए इनकार करता है। वह पाजेब कितने की थी, मैं उसके दाम भर सकती हूँ।

मैंने कहा, "यह आप क्या कहती है! बच्चे बच्चे हैं। आपने छुन्नू से सहूलियत से पूछा भी !"

उन्होंने उसी समय छुन्नू को बुलाकर मेरे सामने कर दिया। कहा कि क्यों रे, बता क्यों नहीं देता जो तैने पाजेब देखी हो ?

छुन्नू ने जोर से सिर हिलाकर इनकार किया। और बताया कि पाजेब आशुतोष के हाथ में मैंने देखी थी और वह पतंग वालों को दे आया है। मैंने खूब देखी थी, वह चाँदी की थी।

"तुम्हें ठीक मालूम है ?"

"हाँ, वह मुझसे कह रहा था कि तू भी चल। पतंग लाएंगे।"

"पाजेब कितनी बड़ी थी? बताओ तो ।"

छुन्नू ने उसका आकार बताया, जो ठीक ही था।

मैंने उसकी माँ की तरफ देखकर कहा देखिए न पहले यही कहता था कि मैंने पाजेब देखी तक नहीं। अब कहता है कि देखी है ।

माँ ने मेरे सामने छुन्नू को खींचकर तभी धम्म-धम्म पीटना शुरू कर दिया। कहा कि क्यों रे, झूठ बोलता है ? तेरी चमड़ी न उधेड़ी तो मैं नहीं।

मैंने बीच-बचाव करके छुन्नू को बचाया। वह शहीद की भांति पिटता रहा था। रोया बिल्कुल नहीं और एक कोने में खड़े आशुतोष को जाने किस भाव से देख रहा था।

खैर, मैंने सबको छुट्टी दी। कहा, जाओ बेटा छुन्नू खेलो। उसकी माँ को कहा, आप उसे मारिएगा नहीं। और पाजेब कोई ऐसी बड़ी चीज़ नहीं है।

छुन्नू चला गया। तब, उसकी माँ ने पूछा कि आप उसे कसूरवर समझतें हैं ?

मैंने कहा कि मालूम तो होता है कि उसे कुछ पता है। और वह मामले में शामिल है।

इस पर छुन्नू की माँ ने पास बैठी हुई मेरी पत्नी से कहा, "चलो बहनजी, मैं तुम्हें अपना सारा घर दिखाए देती हूँ। एक-एक चीज देख लो। होगी पाजेब तो जाएगी कहाँ ?"

मैंने कहा, "छोड़िए भी। बेबात को बात बढ़ाने से क्या फायदा ।" सो ज्यों-त्यों मैंने उन्हें दिलासा दिया। नहीं तो वह छुन्नू को पीट-पाट हाल-बेहाल कर डालने का प्रण ही उठाए ले रही थी। कुलच्छनी, आज उसी धरती में नहीं गाड़ दिया तो, मेरा नाम नहीं ।

खैर, जिस-तिस भांति बखेड़ा टाला। मैं इस झंझट में दफ्तर भी समय पर नहीं जा सका। जाते वक्त श्रीमती को कह गया कि देखो, आशुतोष को धमकाना मत। प्यार से सारी बातें पूछना। धमकाने से बच्चे बिगड़ जाते हैं, और हाथ कुछ नहीं आता। समझी न ?

शाम को दफ्तर से लौटा तो श्रीमती से सूचना दी कि आशुतोष ने सब बतला दिया है। ग्यारह आने पैसे में वह पाजेब पतंग वाले को दे दी है। पैसे उसने थोड़े-थोड़े करके देने को कहे हैं। पाँच आने जो दिए वह छुन्नू के पास हैं। इस तरह रत्ती-रत्ती बात उसने कह दी है ।

कहने लगी कि मैंने बड़े प्यार से पूछ-पूछकर यह सब उसके पेट में से निकाला है। दो-तीन घंटे में मगज़ मारती रही। हाय राम, बच्चे का भी क्या जी होता है।

मैं सुनकर खुश हुआ। मैंने कहा कि चलो अच्छा है, अब पाँच आने भेजकर पाजेब मँगवा लेंगे। लेकिन यह पतंग वाला भी कितना बदमाश है, बच्चों के हाथ से ऐसी चीज़ें लेता है। उसे पुलिस में दे देना चाहिए । उचक्का कहीं का !

फिर मैंने पूछा कि आशुतोष कहाँ है?

उन्होंने बताया कि बाहर ही कहीं खेल-खाल रहा होगा।

मैंने कहा कि बंसी, जाकर उसे बुला तो लाओ।

बंसी गया और उसने आकर कहा कि वे अभी आते हैं।

"क्या कर रहा है ?"

"छुन्नू के साथ गिल्ली डंडा खेल रहे हैं ।"

थोड़ी देर में आशुतोष आया । तब मैंने उसे गोद में लेकर प्यार किया । आते-आते उसका चेहरा उदास हो गया और गोद में लेने पर भी वह कोई विशेष प्रसन्न नहीं मालूम नहीं हुआ।

उसकी माँ ने खुश होकर कहा कि आशुतोष ने सब बातें अपने आप पूरी-पूरी बता दी हैं। हमारा आशुतोष बड़ा सच्चा लड़का है ।

आशुतोष मेरी गोद में टिका रहा। लेकिन अपनी बड़ाई सुनकर भी उसको कुछ हर्ष नहीं हुआ, ऐसा प्रतीत होता था।

मैंने कहा कि आओ चलो । अब क्या बात है। क्यों हज़रत, तुमको पाँच ही आने तो मिले हैं न ? हम से पाँच आने माँग लेते तो क्या हम न देते? सुनो, अब से ऐसा मत करना, बेटे !

कमरे में जाकर मैंने उससे फिर पूछताछ की, "क्यों बेटा, पतंग वाले ने पाँच आने तुम्हें दिए न ?"

"हाँ"!

"और वह छुन्नू के पास हैं न!"

"हाँ!"

"अभी तो उसके पास होंगे न !"

"नहीं"

"खर्च कर दिए !"

"नहीं"

"नहीं खर्च किए?"

"हाँ"

"खर्च किए, कि नहीं खर्च किए ?"

उस ओर से प्रश्न करने वह मेरी ओर देखता रहा, उत्तर नहीं दिया।

"बताओं खर्च कर दिए कि अभी हैं ?"

जवाब में उसने एक बार 'हाँ' कहा तो दूसरी बात 'नहीं' कहा।

मैंने कहा, तो यह क्यों नहीं कहते कि तुम्हें नहीं मालूम है ?

"हाँ।"

"बेटा, मालूम है न ?"

"हाँ।"

पतंग वाले से पैसे छुन्नू ने लिए हैं न?

"हाँ"

"तुमने क्यों नहीं लिए ?"

वह चुप।

"इकन्नियां कितनी थी, बोलो ?"

"दो।"

"बाकी पैसे थे ?"

"हाँ"

"दुअन्नी थी!"

"हाँ ।"

मुझे क्रोध आने लगा। डपटकर कहा कि सच क्यों नहीं बोलते जी ? सच बताओ कितनी इकन्नियां थी और कितना क्या था ।"

वह गुम-सुम खड़ा रहा, कुछ नहीं बोला।

"बोलते क्यों नहीं ?"

वह नहीं बोला।

"सुनते हो ! बोला-नहीं तो---"

आशुतोष डर गया। और कुछ नहीं बोला।

"सुनते नहीं, मैं क्या कह रहा हूँ?"

इस बार भी वह नहीं बोला तो मैंने कान पकड़कर उसके कान खींच लिए। वह बिना आँसू लाए गुम-सुम खड़ा रहा।

"अब भी नहीं बोलोगे ?"

वह डर के मारे पीला हो आया। लेकिन बोल नहीं सका। मैंने जोर से बुलाया "बंसी यहाँ आओ, इनको ले जाकर कोठरी में बंद कर दो ।"

बंसी नौकर उसे उठाकर ले गया और कोठरी में मूंद दिया।

दस मिनट बाद फिर उसे पास बुलवाया। उसका मुँह सूजा हुआ था। बिना कुछ बोले उसके ओंठ हिल रहे थे। कोठरी में बंद होकर भी वह रोया नहीं।

मैंने कहा, "क्यों रे, अब तो अकल आई ?"

वह सुनता हुआ गुम-सुम खड़ा रहा।

"अच्छा, पतंग वाला कौन सा है ? दाई तरफ का चौराहे वाला ?"

उसने कुछ ओठों में ही बड़बड़ा दिया। जिसे मैं कुछ समझ न सका ।

"वह चौराहे वाला ? बोलो---"

"हाँ।"

"देखो, अपने चाचा के साथ चले जाओ। बता देना कि कौन सा है। फिर उसे स्वयं भुगत लेंगे। समझते हो न ?"

यह कहकर मैंने अपने भाई को बुलवाया। सब बात समझाकर कहा, "देखो, पाँच आने के पैसे ले जाओ। पहले तुम दूर रहना। आशुतोष पैसे ले जाकर उसे देगा और अपनी पाजेब माँगेगा। अव्वल तो यह पाजेब लौटा ही देगा। नहीं तो उसे डांटना और कहना कि तुझे पुलिस के सुपुर्द कर दूंगा। बच्चों से माल ठगता है ? समझे ? नरमी की जरूरत नहीं हैं।"

"और आशुतोष, अब जाओ। अपने चाचा के साथ जाओ।" वह अपनी जगह पर खड़ा था। सुनकर भी टस-से-मस होता दिखाई नहीं दिया।

"नहीं जाओगे!"

उसने सिर हिला दिया कि नहीं जाऊंगा।

मैंने तब उसे समझाकर कहा कि "भैया घर की चीज है, दाम लगे हैं। भला पाँच आने में रुपयों का माल किसी के हाथ खो दोगे ! जाओ, चाचा के संग जाओ। तुम्हें कुछ नहीं कहना होगा। हाँ, पैसे दे देना और अपनी चीज वापस माँग लेना। दे तो दे, नहीं दे तो नहीं दे । तुम्हारा इससे कोई सरोकार नहीं। सच है न, बेटे ! अब जाओ।"

पर वह जाने को तैयार ही नहीं दिखा। मुझे लड़के की गुस्ताखी पर बड़ा बुरा मालूम हुआ। बोला, "इसमें बात क्या है? इसमें मुश्किल कहाँ है? समझाकर बात कर रहे है सो समझता ही नहीं, सुनता ही नहीं।"

मैंने कहा कि, "क्यों रे नहीं जाएगा?"

उसने फिर सिर हिला दिया कि नहीं जाऊंगा।

मैंने प्रकाश, अपने छोटे भाई को बुलाया। कहा, "प्रकाश, इसे पकड़कर ले जाओ।"

प्रकाश ने उसे पकड़ा और आशुतोष अपने हाथ-पैरों से उसका प्रतिकार करने लगा। वह साथ जाना नहीं चाहता था।

मैंने अपने ऊपर बहुत जब्र करके फिर आशुतोष को पुचकारा, कि जाओ भाई! डरो नहीं। अपनी चीज घर में आएगी। इतनी-सी बात समझते नहीं। प्रकाश इसे गोद में उठाकर ले जाओ और जो चीज माँगे उसे बाजार में दिला देना। जाओ भाई आशुतोष !

पर उसका मुंह फूला हुआ था। जैसे-तैसे बहुत समझाने पर वह प्रकाश के साथ चला। ऐसे चला मानो पैर उठाना उसे भारी हो रहा हो। आठ बरस का यह लड़का होने को आया फिर भी देखो न कि किसी भी बात की उसमें समझ नहीं हैं। मुझे जो गुस्सा आया कि क्या बतलाऊं! लेकिन यह याद करके कि गुस्से से बच्चे संभलने की जगह बिगड़ते हैं, मैं अपने को दबाता चला गया। खैर, वह गया तो मैंने चैन की सांस ली।

लेकिन देखता क्या हूँ कि कुछ देर में प्रकाश लौट आया है।

मैंने पूछा, "क्यों?"

बोला कि आशुतोष भाग आया है।

मैंने कहा कि "अब वह कहाँ है?"

"वह रूठा खड़ा है, घर में नहीं आता।"

"जाओ, पकड़कर तो लाओ।"

वह पकड़ा हुआ आया। मैंने कहा, "क्यों रे, तू शरारत से बाज नहीं आएगा? बोल, जाएगा कि नहीं?"

वह नहीं बोला तो मैंने कसकर उसके दो चांटे दिए। थप्पड़ लगते ही वह एक दम चीखा, पर फौरन चुप हो गया। वह वैसे ही मेरे सामने खड़ा रहा।

मैंने उसे देखकर मारे गुस्से से कहा कि ले जाओ इसे मेरे सामने से। जाकर कोठरी में बंद कर दो। दुष्ट!

इस बार वह आध-एक घंटे बंद रहा। मुझे ख्याल आया कि मैं ठीक नहीं कर रहा हूँ, लेकिन जैसे कोई दूसरा रास्ता न दिखता था। मार-पीटकर मन को ठिकाना देने की आदत पड़ कई थी, और कुछ अभ्यास न था।

खैर, मैंने इस बीच प्रकाश को कहा कि तुम दोनों पतंग वाले के पास जाओ।

मालूम करना कि किसने पाजेब ली है। होशियारी से मालूम करना। मालूम होने पर सख्ती करना। मुरव्वत की जरूरत नहीं। समझे।

प्रकाश गया और लौटने पर बताया कि उसके पास पाजेब नहीं है।

सुनकर मैं झल्ला आया, कहा कि तुमसे कुछ काम नहीं हो सकता। जरा सी बात नहीं हुई, तुमसे क्या उम्मीद रखी जाए?

वह अपनी सफाई देने लगा। मैंने कहा, "बस, तुम जाओ।"

प्रकाश मेरा बहुत लिहाज मानता था। वह मुंह डालकर चला गया। कोठरी खुलवाने पर आशुतोष को फर्श पर सोता पाया। उसके चेहरे पर अब भी आँसू नहीं थे। सच पूछो तो मुझे उस समय बालक पर करुणा हुई । लेकिन आदमी में एक ही साथ जाने क्या-क्या विरोधी भाव उठते हैं !

मैंने उसे जगाया। वह हड़बड़ाकर उठा। मैंने कहा, "कहो, क्या हालत है?"

थोड़ी देर तक वह समझा ही नहीं। फिर शायद पिछला सिलसिला याद आया।

झट उसके चेहरे पर वहीं जिद, अकड़ ओर प्रतिरोध के भाव दिखाई देने लगे।

मैंने कहा कि या तो राजी-राजी चले जाओ नहीं तो इस कोठरी में फिर बंद किए देते हैं।

आशुतोष पर इसका विशेष प्रभाव पड़ा हो, ऐसा मालूम नहीं हुआ।

खैर, उसे पकड़कर लाया और समझाने लगा। मैंने निकालकर उसे एक रुपया दिया और कहा, "बेटा, इसे पतंग वाले को दे देना और पाजेब माँग लेना कोई घबराने की बात नहीं। तुम समझदार लड़के हो।"

उसने कहा कि जो पाजेब उसके पास नहीं हुई तो वह कहाँ से देगा?

"इसका क्या मतलब, तुमने कहा न कि पाँच आने में पाजेब दी है। न हो तो छुन्नू को भी साथ ले लेना। समझे?"

वह चुप हो गया। आखिर समझाने पर जाने को तैयार हुआ। मैंने प्रेमपूर्वक उसे प्रकाश के साथ जाने को कहा। उसका मुँह भारी देखकर डांटने वाला ही था कि इतने में सामने उसकी बुआ दिखाई दी।

बुआ ने आशुतोष के सिर पर हाथ रखकर पूछा कि कहाँ जा रहे हो, मैं तो तुम्हारे लिए केले और मिठाई लाई हूँ।

आशुतोष का चेहरा रूठा ही रहा। मैंने बुआ से कहा कि उसे रोको मत, जाने दो।

आशुतोष रुकने को उद्यत था। वह चलने में आनाकानी दिखाने लगा। बुआ ने पूछा, "क्या बात है?"

मैंने कहा, "कोई बात नहीं, जाने दो न उसे।"

पर आशुतोष मचलने पर आ गया था। मैंने डांटकर कहा, "प्रकाश, इसे ले क्यों नहीं जाते हो?"

बुआ ने कहा कि बात क्या है? क्या बात है?

मैंने पुकारा, "बंसी, तू भी साथ जा। बीच से लौटने न पाए।" सो मेरे आदेश पर दोनों आशुतोष को जबरदस्ती उठाकर सामने से ले गए। बुआ ने कहा, "क्यों उसे सता रहे हो?"

मैंने कहा कि कुछ नहीं, जरा यों ही-

फिर मैं उनके साथ इधर-उधर की बातें ले बैठा। राजनीति राष्ट्र की ही नहीं होती, मुहल्ले में भी राजनीति होती है। यह भार स्त्रियों पर टिकता है। कहाँ क्या हुआ, क्या होना चाहिए इत्यादि चर्चा स्त्रियों को लेकर रंग फैलाती है। इसी प्रकार कुछ बातें हुईं, फिर छोटा-सा बक्सा सरका कर बोली, इनमें वह कागज है जो तुमने माँगें थे। और यहाँ-

यह कहकर उन्होंने अपने बास्कट की जेब में हाथ डालकर पाजेब निकालकर सामने की, जैसे सामने बिच्छू हों। मैं भयभीत भाव से कह उठा कि यह क्या?

बोली कि उस रोज भूल से यह एक पाजेब मेरे साथ चली गई थी।

- जैनेन्द्र